'नई दुनिया' (इंदौर)

१० मई १९९६

तिब्बत को लेकर चीन-अमेरिका फिर आमने-सामने हैं

शशिधर खाँ

तिब्बत में जनतांत्रिक अधिकारों और पूर्ण आजादी के लिए १९९० से चल रहे आंदोलन ने इस वर्ष काफी जोर पकड़ लिया है। चीन की सरकार की बौखलाहट के लिए वैसे तो आंदोलन का लगातार जोर पकड़ते जाना पर्याप्त है लेकिन उस स्थिति का क्या कहना जब इस आंदोलन को व्यापक अंतरराष्ट्रीय समर्थन मिल रहा हो। तिब्बत के आध्यात्मिक नेता दलाई लामा यों तो १९५१ से ही अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहे हैं और उसी समय से चीन की सरकार तिब्बतियों के शांतिपूर्ण प्रदर्शनों को टैंकों से कुचलती रही है, ठीक उसी तरह से जैसे चीन ने अपने ही देश के छात्र आंदोलन का थ्येनमानआन चौक पर दमन किया था, लेकिन १९९० में जब दलाई लामा ने अपने यहाँ के जनप्रतिनिधियों के मंच 'कशाग' से हर प्रकार के अधिकारों की आवाज उठाई तो चीन के कान खड़े हो गए, क्योंकि दलाई लामा के जनतांत्रिक प्रयासों को देश-विदेश से अनेकानेक शुभकामनाएँ प्राप्त हुई-खासकर अमेरिका से और भी ज्यादा। तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति श्री जॉर्ज बुश ने तो एक कदम आगे बढ़कर दलाई लामा को अपने यहाँ आने का निमंत्रण दे डाला जो बात चीन को जरा भी अच्छी नहीं लगी।

दलाई लामा ने पहली बार खुलकर अपने यहाँ की जनता से कहा कि हमारे यहाँ की 'निर्वासित सरकार' कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका बिल्कुल स्वतंत्र होनी चाहिए, जिसके लिए हमारा आंदोलन जारी रहेगा, लेकिन हमें अहिंसा का रास्ता कतई नहीं छोड़ना है और उस समय से राष्ट्रव्यापी सभाओं, प्रदर्शनों तथा गोष्ठियों का सिलसिला शुरू हो गया।

चीनी शासक यह कहकर तिब्बत को पूरी आजादी नहीं देना चाहते कि तिब्बत तो चीन का अटूट हिस्सा है, उसे इसे अलग से आजाद करने का सवाल ही बेतुका है। उनके अनुसार चीन आजाद है, तो तिब्बत भी है और इस मामले में किसी की रुचि दिखाना चीन के अंदरूनी मामले में दखलंदाजी मानी जाएगी। दलाई लामा अब पूरे विश्व को बता चुके हैं कि तिब्बत एक आजाद देश था, जिसे चीन ने अपनी ताकत की बदौलत १९५१ में गुलाम बना दिया। उन्होंने कहा है कि अहिंसा में विश्वास रखने वाले दस लाख बौद्धों को मरवाकर चीन ने ल्हासा की केंद्रीय बौद्ध शासन व्यवस्था खत्म कर दी और पराधीन हो गया तिब्बत। दलाई लामा का कहना है कि जब तिब्बत आजाद है तो वहाँ के शांतिपूर्ण प्रदर्शनों पर तोपें दागने की क्या जरूरत है और मठों के चारों ओर फौजी छावनी बनाने का क्या तुक है, जहाँ सिर्फ प्रार्थनाएँ होती हैं। उन्होंने साफ शब्दों में कहा है कि तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व रहा है, इसलिए यह देश किसी के अधीन नहीं रहेगा और आजादी के लिए बरस दर बरस संघर्ष जारी रहेगा।

ताइवान की ही तरह चीन को तिब्बत के मामले में भी सबसे ज्यादा खतरा अमेरिका से है, जो शुरू से ही दलाई लामा का साथ दे रहा है। १९९१ में चीनी विरोध के बावजूद अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री जॉर्ज बुश ने दलाई लामा को न केवल अपने यहाँ आमंत्रित किया, बल्कि उनका स्वागत एक राष्ट्राध्यक्ष के रूप में किया और साथ में यह आश्वासन भी दिया कि तिब्बतियों की मदद में अमेरिका पीछे नहीं हटेगा।

चीन को अब शायद यह महसूस हो रहा है कि तिब्बत पर ज्यादा दिन कब्जा जमाए रखना संभव नहीं हो पाएगा, इसलिए सैनिक शिकंजा दिन-ब-दिन तिब्बत के चारों ओर कसता जा रहा है, ताकि इसके पहले कि कहीं अमेरिका, ताइवान जैसी स्थिति पैदा कर दे, पूरी तैयारी कर ली जाए। चीन की सतर्कता बढ़ी पिछले वर्ष, जब तिब्बत में पहली राजनीतिक पार्टी नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी (एनडीपी) का गठन हुआ। यह तिब्बत के चीनी आधिपत्य के बाद के इतिहास की पहली घटना थी जिसका पूरे प्रांत में हर्षोल्लास के साथ स्वागत किया गया और लगे हाथ इसकी युवा शाखा का भी गठन कर दिया गया। वैसे पार्टी बनाने का श्रेय भी तिब्बती युवा कांग्रेस को ही है जिसे दलाई लामा का आशीर्वाद प्राप्त है।

इस पार्टी के अस्तित्व में आने और इसे मान्यता देने का परिणाम चीनी अधिकारी जानते थे, इसलिए इसकी प्रस्तावित रैली पर रोक लगा दी गई, लेकिन मामला दबने के बजाए काबू से बाहर हो गया। चीनी शासकों द्वारा मान्यता न दिए जाने के बावजूद हाल में हुए तिब्बती पीपुल्स डिपुटीज के चुनाव में एनडीपी ने अपने उम्मीदवार खड़े किए और सबके सब जीत गए। फिर मार्च में दलाई लामा द्वारा जनमत संग्रह की घोषणा ने आग में घी का काम किया; जिसके जवाब में चीनी अधिकारियों ने धरपकड़ अभियान शुरू किया और एक हजार से ज्यादा लोग अब तक विभिन्न जेलों में बंद किए जा चुके हैं।

दलाई लामा ने अपने यहाँ के नागरिकों को संबोधित करते हुए कहा कि जनमत संग्रह कराकर हमें अपना भविष्य स्वयं तय करने का अधिकार दिया जाना चाहिए और उन्होंने मानवाधिकार उल्लंघन के संबंध में संयुक्त राष्ट्र की ओर से पारित किए जाने वाले प्रस्ताव का भी जिक्र किया। पिछले वर्ष नवंबर में चीनी अधिकारियों ने छह वर्षीय शिशु गेदुम चोएक्यी नेईमा को रहस्यमय ढंग से गायब करवा दिया जिसे दलाई लामा ने तिब्बतियों के अगले आध्यात्मिक नेता और पंचेन लामा बनाने के लिए चुना था। पूरे तिब्बत में इस बात को लेकर बवेला मचा, जिस पर काबू पाने में चीन अभी भी सफल नहीं हो पाया है। चीन ने अपनी सफाई में कहा है कि बच्चा ल्हासा में ही सुरक्षित है, लेकिन कहाँ है, यह जानकारी देने से इंकार कर दिया। जबकि रिपोर्ट है कि शिशु नेईमा को पेइचिंग में नजरबंद करके रखा गया है।

दो मानवाधिकार संगठनों- तिब्बत इंफॉर्मेशन नेटवर्क और एशिया वॉच ने इसे मुद्दा बनाया और अमेरिकी समर्थन की बदौलत ५२वें संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग के जिनेवा स्थित मुख्यालय द्वारा शीघ्र ही चीन के खिलाफ प्रस्ताव पारित होने वाला है। चीन ने अपनी ओर से इस तरह का प्रस्ताव पारित न होने देने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी है, लेकिन उससे तिब्बतियों के प्रति अंतरराष्ट्रीय सहानुभूति और बढ़ती ही जा रही है। अमेरिकी और योरपीय समुदाय के रुख से साफतौर पर जाहिर हो चुका है कि इस प्रस्ताव को उनका भरपूर समर्थन मिलेगा। चीन को इस बीच तिब्बत के मामले में विश्व के शक्तिशाली देशों को आश्वस्त करने की कोशिश में बिल्कुल प्रतिकूल रुख का सामना करना पड़ा है जिससे चीनी शासक अपने को बड़ी असमंजस की स्थिति में पा रहे हैं। माहौल इतना बिगड़ चुका है कि तिब्बत में चल रहा दमनात्मक रवैया और कठोर करते भी नहीं बन रहा है। तिब्बत से ज्यादा चीनी अधिकारी ताइवान को लेकर परेशान हैं। ताइवान के लिए अंतरराष्ट्रीय समर्थन जुटाने की कोशिश में चीनी शासकों ने इधर फ्रांस और जापान की यात्रा की। प्रधानमंत्री श्री ली फंग मार्च में पेरिस गए और विदेशमंत्री श्री छ्येन छीछन एक अप्रैल को तोक्यो पहुँचे। श्री ली फंग की फ्रांस यात्रा ऐतिहासिक थी, क्योंकि कई वर्ष के बाद कोई चीनी प्रधानमंत्री अमेरिका के बाद पश्चिम के दूसरे शक्तिशाली देश के दौरे पर गया था, लेकिन जाते ही जिस तरह के माहौल का सामना श्री ली फंग को करना पड़ा कि उनकी यात्रा का मजा किरकिरा हो गया। फ्रांस के तकरीबन एक दर्जन मानवाधिकार और सामाजिक संगठनों ने पूरे देश में प्रदर्शन करके तिब्बत में अपनाई जा रही दमन नीति की आलोचना की और तिब्बतियों को तुरंत आजादी देने की माँग की। हालाँकि फ्रांस के राष्ट्रपति श्री जैक शिराँक ने चीनी प्रधानमंत्री के स्वागत में कोई कमी नहीं होने दी, लेकिन प्रदर्शनों और जगह-जगह चिपकाए गए पोस्टरों से जो मेहमान का मिजाज खट्टा हुआ, वह रोक पाना तो उनके वश में था नहीं। हाँ, सुरक्षाकर्मियों ने प्रदर्शनकारियों को दूर रखने की पूरी कोशिश की।

उससे इतना सबक जरूर लिया गया कि जापान पहुँचकर चीनी विदेशमंत्री ने सिर्फ ताइवान का जिक्र किया और यह इत्मीनान करना चाहा कि अमेरिका से टकराव की स्थिति में जापान कहीं अमेरिका का साथ न दे दे, क्योंकि श्री छ्येन छीछन को १६ से १८ अप्रैल को तोक्यो में होने वाले जापान-अमेरिका शिखर सम्मेलन की बात तो ध्यान में थी ही।

ताइवान की ही तरह चीन को तिब्बत के मामले में भी सबसे ज्यादा खतरा अमेरिका से है, जो शुरू से ही दलाई लामा का साथ दे रहा है। १९९१ में चीनी विरोध के बावजूद अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री जॉर्ज बुश ने दलाई लामा को न केवल अपने यहाँ आमंत्रित किया, बल्कि उनका स्वागत एक राष्ट्राध्यक्ष के रूप में किया और साथ में यह आश्वासन भी दिया कि तिब्बतियों की मदद में अमेरिका पीछे नहीं हटेगा। ये दोनों ही बातें चीन को नागवार गुजरीं और श्री छ्येन छीछन ने पेइचिंग स्थित अमेरिकी राजदूत को बुलाकर, कड़ा विरोध पत्र थमाया। उस यात्रा को लेकर काफी समय तक शोर-शराबा होता रहा। अमेरिका सीनेट ने दलाई लामा की लड़ाई को उचित बताया, अमेरिका में उनका नागरिक अभिनंदन किया गया और 'लॉस एंजिल्स टाइम्स' ने तो यहाँ तक छाप दिया कि अमेरिका, तिब्बत में सेना भेजने पर विचार कर रहा है। चीन में इसकी प्रतिक्रिया होनी स्वाभाविक थी। उसके पहले दलाई लामा लंदन गए थे और उस समय भी चीन ने उनके स्वागत किए जाने का विरोध किया था। हालाँकि ब्रिटेन ने अभी तक दलाई लामा के प्रति खुले तौर पर समर्थन की बात नहीं कही है और उसकी वजह है हाँगकाँग, जिसके लिए ब्रिटेन को १९९७ तक का इंतजार है, जब इस पर पूरी तरह चीन का अधिकार हो जाएगा। हालाँकि अब तो ब्रिटेन के व्यापारी यहाँ से अपना कारोबार लगभग समेट चुके हैं, लेकिन फिर भी एक साल के लिए चीन से तनाव मोल लेकर थोड़ा ही सही, नुकसान क्यों उठाया जाए। खासकर १९९१ में तो हाँगकाँग में ब्रिटेन का कारोबार जोरों पर था, इसलिए ब्रिटेन ने इस बात का ख्याल रखा कि चीन की भावनाओं की कद्र की जाए, लेकिन इतना स्पष्ट होता जा रहा है कि तिब्बत का मामला अब जल्द ही रंग लाएगा और यह ऐसा मुद्दा है जिस पर पूरे संसार में कहीं से भी चीन को समर्थन नहीं मिलेगा।